सट्टेबाज़ और जुआरी पूँजीवाद

● आशीष

पूँजीवादी अर्थव्यवस्था विकास के कई मंज़िलों से होकर गुज़री है। इन मंज़िलों के बारे में हम सबने अपनी पाठ्यपुस्तकों में भी पढ़ा है। एक दौर था 'लेसेज़ फेयर' यानी मुक्त प्रतियोगिता का दौर। जो अपने आप ही एकाधिकारी वित्तीय पूँजीवाद के दौर में तब्दील हो जाता है क्योंकि मुक्त व्यापार में सब विजयी नहीं होते, कुछ विजयी होते हैं और बाकी गर्त में चले जाते हैं। एकाधिकारी पूँजीवाद के जन्म के बाद पूँजीवाद कई चरणों से गुज़रा है। लेकिन हम इन गहरी चर्चाओं में नहीं जाएँगे क्योंकि वे इस लेख की सीमाओं का अतिक्रमण कर जाती हैं।

हम हाल ही में स्टॉक एक्सचेंज में आई दो बड़ी गिरावटों की चर्चा करते हैं। पहले 17 मई 2006 को एक काला गुरुवार आया जिस दिन सेंसेक्स लगभग पौने नौ सौ अंक गिर गया। यह भारतीय स्टॉक एक्सचेंज में सूचकांक गिरावट का नया रिकॉर्ड था। लेकिन यह रिकॉर्ड ज्यादा जी नहीं पाया और आने वाले सोमवार यानी 22 मई को ही यह टूट गया। इतिहास काला सोमवार का साक्षी बना जब सूचकांक 1111 अंक नीचे गिर गया! भाई साहब! पूरे दलाल मार्ग पर पहले अफरा-तफरी और फिर सन्नाटा, फिर अफरा-तफरी, फिर सन्नाटा! तबीयत हरी हो गई थी सबकी वहाँ पर! 17 मई 2006 से पहले का रिकॉर्ड भी ज्यादा पुराना नहीं था। वह यूपीए की सरकार आने के साथ ही कायम हुआ था, ठीक दो साल पहले 17 मई 2004 को। उस दिन भी सेंसेक्स करीब साढ़े आठ सौ अंक नीचे गिरा था। और जनाब उसके पहले के रिकॉर्ड का श्रेय जाता है महान दलाल हर्षद मेहता को! जी हाँ! 1992 में भी सेंसेक्स कुछ ऐसे ही औंधे मुँह गिरा था। सेंसेक्स का अर्थ होता है सेंसिटिव इण्डेक्स जो अग्रणी कम्पनियों के बाज़ार मूल्य को प्रदर्शित करता है, यानी अर्थव्यवस्था और निवेश की सेहत को दिखलाता है। ये तो बड़ी-बड़ी गिरावट की घटनाएँ थीं, लेकिन नयी आर्थिक नीतियों के लागू होने और विदेशी संस्थागत निवेशों की शुरुआत के साथ ही छोटी-छोटी गिरावटों के कुछ-कुछ समय पर बड़ी गिरावटों का एक सिलसिला शुरू हो गया था। जिसकी ताज़ा कड़ियाँ थीं काला गुरूवार और काला सोमवार।

लेकिन ऐसा होता ही क्यों है? मन्दी क्यों आती है? बाज़ार क्यों गिरता है? अपनी "अन्तिम विजय" (??!!) के बाद भी पूँजीवाद को दस्त, कब्ज़, बदहज़मी और गैस की शिकायत क्यों बनी रहती है?

दिक्कत को पूँजीपतियों के महान चिरस्मरणीय मुनीम श्री श्री जॉन मेनार्ड कीन्स ने ही समझ लिया था और अपने आकाओं को चेताया भी था कि गुरू सम्भल जाओ! लेकिन गुरू जी की आँखों में तो मुनाफे की पट्टी बँधी हुई है। दरअसल; पूरे पूँजीवाद का चरित्र बुरी तरह सट्टेबाज़ हो चुका है। आज पूरे विश्व की समूची पूँजी का 80 फीसदी से भी ज्यादा हिस्सा शेयर मार्केट और सट्टेबाज़ी में लगा हुआ है। एक ऐसी पूँजी जो भौतिक रूप से कहीं नहीं है और जो अफवाहों और अटकलों के साथ अस्तित्व में आती और जाती है। सिर्फ 15 से 20 फीसदी हिस्सा ऐसा है जो वास्तविक उत्पादन में लगी पूँजी कही जा सकती है। शेयर बाज़ार और सट्टेबाज़ी फटाफट मुनाफ़ा कमाने का एक आसान जरिया बनते हैं। नतीजतन, पूँजी का 80 से 90 फीसदी इसी अटकलबाजी, सट्टेबाज़ी और शेयर बाज़ार में लग जाते हैं। हमेशा से ऐसा नहीं था। 1929-31 की महामन्दी के पहले उत्पादक पूँजी ही ज्यादा थी, लेकिन धीरे-धीरे पूँजी का अनुत्पादक चरित्र बढ़ता जा रहा था और सट्टा पूँजी फूलती जा रही थी। इसी परिघटना पर चेताते हुए कीन्स ने कहा था कि अगर औद्योगिक पूँजी की धारा पर सट्टा पूँजी एक बुलबुले के समान हो तो कोई ख़ास चिन्ता की बात नहीं है। लेकिन अगर औद्योगिक पूँजी ही सट्टा पूँजी की धारा पर एक बुलबुला बन जाए तो मामला गड़बड़ हो सकता है। और आज यही हो रहा है। पूरा पूँजीवादी बाज़ार और अर्थतंत्र और उससे जुड़े तमाम छोटे-बड़े निवेशक सट्टा पूँजी की दया पर पल रहे हैं। मामला गड़बड़ा चुका है! चिदम्बरम महोदय चाहे कितना भी आश्वासन और ढाढ़स बँधा लें, ये मन्दियों का चक्र जारी रहेगा। अनुत्पादक नरभक्षी पूँजीवाद छोटे निवेशकों को निगलता रहेगा और आम ग़रीब आबादी को आर्थिक अस्थिरता, महँगाई, बेरोज़गारी, भुखमरी और बदहाली का तोहफ़ा देता रहेगा। यह पूँजीवाद का असाध्य रोग है—पहले अतिउत्पादन, फिर पूँजी का अनुत्पादक और सट्टेबाज़ होते जाना, और फिर पूरे तंत्र का सट्टे और अफ़वाह के रहमो-करम पर आ जाना। एक बार, दो बार , तीन बार ऐसे संकट से युद्ध से उबरा जा सकता है। बार-बार नहीं। पिछले पन्द्रह वर्षों में हमने तमाम युद्ध देखे हैं लेकिन कोई भी पूँजीवाद के संकट का हल नहीं कर पा रहा है। वह बस पेन रिलीफ़ है। मर्ज़ का इलाज नहीं। इस व्यवस्था के चौधरियों के पास खुद इस बीमारी का कोई इलाज नहीं है। क्योंकि वे भी अपनी मनमर्जी इस भूमण्डलीकत पूँजीवादी साम्राज्यवादी व्यवस्था को नहीं चलाते हैं। उसकी अपनी एक गतिकी है और उसमें ये संकट अंतर्निहित हैं। ये मन्दी पूँजीवादी विश्व व्यवस्था का अंतकारी रोग है जो उसके साथ ही ख़त्म होगा। और जाहिर है कि कोई भी चीज़ अपने आप ख़त्म नहीं होती। उसे ख़त्म करना पड़ता है।

●